कान्हा क्षेत्र के आदिवासीयों की विविधता का सांस्कृतिक अध्ययन पर्यटन के विशेष संदर्भ में

कमलेश कुमार वरकड़े[1], डॉ. बृजेन्द्र कुमार[2]

[1]शोधार्थी, इतिहास विभाग, पंजाब केन्द्रीय विश्वविद्यालय, बठिंडा, 151401
[2]असिस्टेंट प्रोफेसर, इतिहास विभाग, पंजाब केन्द्रीय विश्वविद्यालय, बठिंडा,151401

सारांश

कान्हा और उसके नजदीकी आदिवासी क्षेत्र की विविधताओं का सांस्कृतिक अध्ययन और पर्यटन क्षेत्र की विशेषताओं को पहचानना हैं, यहाँ पर्यटन स्थल प्राचीन काल से मौजूद हैं। पर्यटन, इस क्षेत्र में सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक स्थिति के विकास में सहायक हैं। क्षेत्रविशेष तथा विभिन्नताओं जैसे- खान-पान, रहन-सहन, वेशभूषा, बोली-भाषा, मेंले-त्यौहारों, हस्तशिल्प तथा धार्मिक पर्वों की विभिन्न जानकारी मिलती हैं। कान्हा में जंगल सफारी और अन्य गतिविधियाँ भी हैं। पर्यटकों के आवागमन ने आर्थिक स्तिथि को प्रभावित किया हैं। कान्हा का क्षेत्र, आदिवासी बाहुल क्षेत्र और प्राकृतिक सौन्दर्य से परिपूर्ण के होने के कारण देश के विभिन्न भागों एवं विदेशी पर्यटको के आवागमन देखने मिलते हैं। केन्द्रीय और राज्य सरकार की योजनाएं पर्यटन स्थल के विकास में सहयोगरत हैं, जिससे पर्यटन स्थल को बढ़ावा मिल रहा हैं। पर्यटन के बढ़ते प्रभाव ने परंपराओं के जकड़न से अलग होकर समाज को एक नयी दिशा दे रहा हैं।

महत्वपूर्ण शब्द – पर्यटन, पर्यटक, कान्हा, सांस्कृतिक, जनजाति, पारंपरिक, प्राकृतिक और संस्कृति।

परिचय-

कान्हा के आदिवासी जनजाति मुख्यतः भारत के कटिय प्रदेश-विंध्यपर्वत, सतपुड़ा पठार, छत्तीसगढ़ मैदान में दक्षिण तथा दक्षिण-पश्चिम में गोदावरी नदी तक फैले हुए पहाड़ों और जंगलों में रहने वाली आस्ट्रोलायड नस्ल तथा द्रविड़ परिवार की एक जाति हैं। जो संभवतः पाँचवी-छठी शताब्दी में दक्षिण से गोदावरी के तट को पकड़कर मध्य भारत के पहाड़ों में फैल गई। कालांतर में गोंड जनजाति ने भारत के विभिन्न-विभिन्न हिस्सों में अपने-अपने राज्य

विकसित किये, जिनमें से मध्यप्रदेश मुख्य हैं।[1] मध्य भाग के आदिवासी मूलतः दक्षिण के निवासी हैं, जो मूल रूप से द्रविड़ियन परिवार के माने जाते हैं तथा गोंड जनजाति द्रविड़ संस्कृति का ही एक अंग हैं। "अभी निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता कि मध्यप्रदेश के इतने विशाल क्षेत्र में ये गोंड कहा से आकर बसे हैं। क्रिस्टोन वान फ्यूर हेमेंन डार्फ ने ठीक ही लिखा हैं कि 'यद्यपि द्रविड़ों का मूल इतिहास अनिश्चित हैं किन्तु वे भी यह मानते हैं कि द्रविड़ उसी समय समुद्र मार्ग से भारत के पश्चिमी समुद्री तट से इस देश में आये, जब आर्य लोगों का आगमन हुआ धीरे धीरे ये लोग दक्षिण में जम गये और वहाँ के मूल निवासी उत्तर पश्चिमी एवं दक्षिणी भारत से मध्य भाग के जंगलों तथा पहाड़ियों में खदेड़ दिये गये और वे ही भारत के आदिवासियों के विभिन्न रूपों में हैं।"[2] इस प्रकार इनका प्रभाव जंगलों और पहाड़ों में देखा गया और आज भी वे लोग जंगलों में रहना पसंद करते हैं और अपने आपको वनीय आवरण में सुरक्षित और सशक्त महसूस करते हैं। "आदिवासी प्रकृति प्रेमी होने के कारण प्रायः जंगलों, पहाड़ों या किसी नदी किनारे रहना पसंद करते हैं। प्राकृतिक जीवन ही उनका आर्दश जीवन हैं, साथ ही वे पर्यावरण को किसी भी प्रकार की क्षति पहुँचाये बिना ही आस-पास उपलब्ध वस्तुओं से अपने घर को निर्मित करते हैं। आदिवासी समुदाय के लोग प्रायः घास-फूस व मिट्टी से बने कच्चे घरों में रहते हैं, परन्तु शहरी संस्कृति व सभ्यता के सम्पर्क में आने से अब ये लोग खपरैल वाले कच्चे मकान तथा सम्पन्न परिवार जन ईटों वाले पक्के मकान भी बनवाने लगे हैं।"[3] सांस्कृतिक उथान के प्रभाव ने आदिवासीयों को अपने मूल जीवन से अलगाव होने के प्रमाण भी प्रकट दिए हैं। वे समाज के अपने मूल अस्तित्व से कही आगे बढ़कर आधुनिकता के साथ चल रहे हैं। कान्हा और आस-पास के टुरिज़म ने आधुनिकता के प्रसार में यहां महत्वपूर्ण भूमिका निभाई हैं जो संस्कृति और धार्मिक परम्पराएं उनके उत्सवों और मेंलों में अपना रंग भरती हैं।

पर्यटन –

"आनन्दमयोऽभ्यासनमात्मनं चात्मना तद्भवति। अतिथि देवो भवः।"[4]

अर्थात: जो आत्मा में आनंद की भावना का अनुभव करता हैं, वही अतिथियों को देवता के समान मानता हैं और उनका आदर करता हैं।

किसी भी स्थान, क्षेत्र, देश में आनंद पूर्वक समय बिताने तथा उस स्थान को जानने के लिए पर्यटन किया जाता हैं, पर्यटन में व्यक्ति उन सभी पहलुओं को जान पाता हैं जो वहाँ पर पहले से मौजूद हैं तथा नई जगह जाकर वह नए और भिन्न प्रकार के सभ्यता, संस्कृति और प्रकृति के आनंद का अनुभव करता हैं। पर्यटन के माध्यम से पर्यटक में एक नवीन जन जागृति उत्पन्न होती हैं। भारत सदियों से ही पर्यटन का केंद्र रहा हैं, सामाजिक और सांस्कृतिक क्षेत्र में यहाँ विविधता के कई आयाम हैं जो भारत को अन्य देशों के मुकाबले प्रबल प्रबुद्ध साँस्कृतिक के धनी के

[1] अंकिता अग्रवाल. (2021). *गोंड चित्रकला एक समीक्षात्मक अध्ययन, पी-एच० डी०, शोध-प्रबन्ध.* पृष्ठ सं.3
[2] तिवारी, क. (2006). *सम्पदा; मध्यप्रदेश की जनजातीय सांस्कृतिक परम्परा का साक्ष्य.* पृष्ठ सं.301
[3] अंकिता अग्रवाल. (2021). *गोंड चित्रकला एक समीक्षात्मक अध्ययन, पी-एच० डी०, शोध-प्रबन्ध.* पृष्ठ सं.12
[4] तैत्तिरीय उपनिषद. (2017). *स्वामी त्रिभुवन दास* . दिल्ली : चौखम्बा संस्कृति प्रस्थान. पृष्ठ सं.54

रूप में स्वीकार करता हैं। कान्हा भारत के मध्य देश में होने के साथ-साथ कई अन्य महत्वपूर्ण पक्षो को संजोकर रखा हुआ हैं, जिसमें आदिवासी के परंपरा और संस्कृति प्रमुख हैं। आदिवासी समुदायों का जीवन पारंपरिक रूप से कृषि और जंगलों पर आधारित रहा हैं। कथन हैं कि 'समाज की जड़े अतीत में होती हैं, वह वर्तमान में जीता हैं और भविष्य उसके लिए चिंता और प्रावधान का विषय होता हैं परम्पराएं अतीत को वर्तमान और वर्तमान अतीत को भविष्य से जोड़ती हैं।'[5] कान्हा के क्षेत्र में मुख्यतः गोंड और बैगा आदिवासी निवास करते हैं, हालांकि यहाँ पर उनकी उप-जातियाँ भी निवासरत हैं। सभी की संस्कृति लगभग एक समान हैं। वे सतपुड़ा रेंज के मैकल पर्वत श्रेणियों में अपना जीवन यापन करते हैं वे पारंपरिक रूप से काफी धनी हैं, उनकी अपनी संस्कृति और सभ्यता हैं। जो अब पर्यटन के लिए आकर्षण का मुख्य केंद्र बन चुका हैं, बालाघाट और मण्डला जिले के मध्य करीब बीस-तीस गांवों के समूह आपस में अपनी सभ्यता और संस्कृति को बाँटते, बढ़ाते एवं संरक्षण प्रदान करते हैं। कान्हा पर्यटन क्षेत्र में पर्यटक, आदिवासी क्षेत्रों में प्रमुख रूप से कान्हा नेशनल पार्क, जंगल भ्रमण, पारिस्तिथिकी पर्यटन (इकोटूरिज़्म), धार्मिक पर्यटन, ग्रामीण एवं क्षेत्रीय पर्यटन के द्वारा स्थानीय खान-पान, लोक-कला, गांवों की स्थलाकृति, मेंले-त्यौहार एवं बाजार, मिट्टी के दीवारों एवं कवेलु के घर, शादी-विवाह एवं रीति-रिवाज, संगीत एवं वाद्ययंत्र, पेंटिंग, गोदना एवं कलाकृतियाँ, हस्तशिल्प, कृषि एवं फ़सल, स्वास्थ, खुशहाली और साक्षरता जैसे कई आयामो का पर्यटक, पर्यटन करते हैं। 'भारत सरकार पर्यटन मंत्रालय द्वारा बेस्ट टुरिज़म विलेज के प्रोग्राम ने इन स्थानों के आदिवासियों के दैनिक जीवन में बदलाव लाया हैं'[6] जिससे यहाँ के समुदाय स्वयं को सभ्य बनाने में भागीदारि निभा रहे हैं। रुरल टूरिजम सतत विकास लक्ष्य जैसे नीतियों ने भी ग्रामीण पर्यटन विकास में सहायक हो रही हैं। पर्यटन मंत्रालय भारत सरकार द्वारा केन्द्रीय नोडल एजेंसी-रुरल टूरिज़्म एंड रुरल होमस्टे, पेन इंडिया (pan India) बेस्ट विलेग कॉमपिटिटेशन, रुरल होमस्टे जैसे योजनाएं पर्यटन को बढ़ावा देकर कान्हा के ग्रामीण समुदाय को बेहतर ढंग से जीवन यापन के अवसर प्रदान कर रहे हैं। इससे पर्यटक अपनी परवर्ती सूचनाएं आने वाले पर्यटकों तक पहुंचाते हैं, जिससे पर्यटकों की संख्या में बढ़ोतरी हुई और इन क्षेत्रों में पर्यटन केंद्रों की संख्या में भी बढ़ोतरी हो रही हैं। हाल के वर्षों में कान्हा नेशनल पार्क में पारिस्तिथिकी पर्यटन (इकोटूरिज़्म) ने इस क्षेत्र में समाजिक और आर्थिक विकाश में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई हैं, इससे संस्कृति के संरक्षण को बढ़ावा मिल रहा हैं।

अध्ययन क्षेत्र –

भारत गांवों में बसता हैं, पर्यटन स्थल के रूप में कान्हा और आदिवासी क्षेत्र की विविधता का सांस्कृतिक अध्ययन का जैसे कि परिचय के माध्यम से यहाँ के विभिन्नताओं का संक्षिप्त सार हैं। आदिवासी समुदाय की संस्कृति बाकी अन्य समुदायों की तुलना में अलग हैं एवं इनकी पहचान इनके वेशभूषा और रहन-सहन से इन्हे अलग दर्शाती हैं। कान्हा और आदिवासी जनजाति समुदाय आपस में एक दूसरे के पर्याय हैं। "ग्रामीण परिवेश में होने वाली पर्यटन

[5] दुबे, श. (2014). *परंपरा इतिहास-बोध और संस्कृति*. नई दिल्ली: राधाकृष्ण. पृष्ठ सं.22
[6] नीरज गोहील. (2019). पोटेन्सियल एण्ड प्लानिंग फॉर ट्राइबल टुरिज़म इन इंडिया: अ केस स्टडी ऑन गोंड ट्राइबस ऑफ मध्यप्रदेश, स्टेट इंडिया

गतिविधियों के रूप में परिभाषित जिसमें ग्रामीण जीवन, संस्कृति, कला, विरासत आदि शामिल हैं, जो समृद्ध पर्यटक अनुभव प्रदान करते हैं। यह स्थानीय समुदायों को सामाजिक-आर्थिक रूप से स्वतंत्र बनाने पर केंद्रित हैं। ग्रामीण पर्यटन को अनुभवात्मक यात्रा प्रदान करने के लिए एक बहुत ही प्रभावी तरीका माना गया हैं और यह ग्रामीण समुदायों को उनकी आय के स्तर को बढ़ाने और स्थानीय कला रूपों को संरक्षित करने में भी मदद करता हैं।"[7] गाँव भारत के ग्रामीण पर्यटन की रीढ़ हैं । ग्रामीण पर्यटन भारतीय गाँव की गहरी जड़ें वाली संस्कृति, प्रकृति, कला, शिल्प, विरासत, परंपराएँ, रीति-रिवाज, वेशभूषा, जीवन शैली आदि हैं। ग्रामीण पर्यटन गाँव कृषि, खेती, स्थानीय शासन आदि के बारे में ज्ञान प्राप्त करने में मदद करते हैं। तेज़ गति से आगे बढ़ता शहरी जीवन लोगों को पलायन की तलाश में ग्रामीण क्षेत्रों की ओर जाने के लिए प्रेरित करता हैं। ग्रामीण पर्यटन, गाँव अपने परिवार के साथ कुछ समय बिताने, शांत वातावरण में आराम करने, एक-दूसरे से बातचीत करने, सदियों पुरानी परंपराओं में शामिल होने, जातीयता का अनुभव करने और यादें बनाने के लिए सबसे अच्छी जगह हैं।[8] जो अध्ययन के प्रमुख क्षेत्रों में से एक हैं।

विधियाँ

अवलोकन - पर्यटन के दृष्टिकोण से समाचार, लेख और पुस्तकों, आदिवासी समुदायों के इतिहास बोध का अध्ययन एवं अवलोकन द्वारा कुछ बिंदु प्राप्त हुए जो महत्वपूर्ण हैं, पर्यटन क्षेत्र में भ्रमण के दौरान आदिवासी समुदायों से बातचीत, उनके इतिहास और धरोहर को समझने के लिए उनके साथ समय व्यतीत किया गया। सांस्कृतिक पर्यटन को केंद्र में रखते हुए उनके बोली-भाषा, वेशभूषा, रहन-सहन, खानपान, मेंले-त्योहार, मनोरंजन, लोक नृत्य एवं लोक गीत, धार्मिक पर्वों, पारंपरिक औषधियाँ, वाद्ययंत्र, शादी-विवाह, बारसा (नामकरण), बदलते मौसम के परिवेश में आदिवासीयों द्वारा अपनाए जाने वाले जीवन-यापन की कार्यविधियाँ तथा कान्हा क्षेत्र के ग्रामीण परिवेश को विकसित करने के लिए स्थापित पारिस्तिथिकी पर्यटन (इकोटूरिज़्म) का अवलोकन किया गया हैं।

साक्षात्कार - स्थानीय लोगों से जानकारी के लिए साक्षात्कार का प्रयोग किया गया हैं इस प्रक्रिया में शामिल प्राध्यापक लक्ष्मण तिलगम[9], खैरलांजी पंचायत सरपंच कमलबती इनवाती[10], कोटवाल दिनेश उईके[11], रामकिशोर

[7] (श्रेष्ठ पर्यटन गाँव प्रतिशप्रधा, ग्रामीण पर्यटन, 2023, पृ. 2)

[8] (श्रेष्ठ पर्यटन गाँव प्रतिशप्रधा, ग्रामीण पर्यटन, 2023, पृ. 3)

[9] लक्ष्मण – वे जनजातियों की विशेषता के संदर्भ में बताते हैं और गोंड और बैगा जनजाति के विषय के जानकार हैं वे बताते है कि आदिवासी परंपरा बहुत विशाल है इनकी धरोहर अन्य समुदायों से विशिष्ठ हैं, साथ ही वे आदिवासी समुदायों के लोक कल्याण जैसे कार्यों में लगे हुए हैं।

[10] कमलबती बाई इनवाती – वह खैरलांजी पंचायत की सरपंच है और गाँव की बरीक से बारीक गतिविधि पे नजर रखे हुए है वो बताते है की पर्यटन के माध्यम से लोगों में सजगता आयी है जिससे उनके रहन-सहन में भी परिवर्तन आया है, जिससे ग्रामीण जीवन में खुशहाली हैं।

[11] दिनेश उईके (कोटवाल) – मनना है की आधुनिकता लोगों में नयी उमंग और जोश भर दिया हैं, संस्कृति में बदलाव का मुख्य कारण पर्यटन हैं यंहा दूर-दूर से लोग आते हैं और अपना भ्रमण कर यहाँ नई सोच दे जाते हैं और गाँव के युवा उन जैसे बनने की कोशिश करते हैं। वे बगलीपाठ में लगने वाले मेंले के बारे में बताते हैं, था दूर-दूर से लोगों के आने के पीछे धार्मिक विश्वाश जैसे भावनाओं को उजागर करते हैं, जिनमें उनकी आस्था प्रमुख हैं।

ठाकरे[12], चरणलाल (अहीर)[13] आदि, स्थानीय लोगों से साक्षात्कार द्वारा प्राप्त जानकारी से यह सूचना मिली की वे लोग अपने संस्कृति से कितना लगाव रखते हैं, बदलते परिवेश के साथ भी वे लोग कदम से कदम ताल करने की कोशिश कर रहे हैं, वे आधुनिकता के साथ अपनी पुरानी सभ्यता और संस्कृति को भी बढ़ावा दे रहे हैं। इसके लिए वे सरकार की योजनाओं के साथ भागीदारी बन रहे हैं, कान्हा में बढ़ते पर्यटन से उनके स्वास्थ, शिक्षा, रोजगार और दैनिक जीवन में होने वाली उपयोगी वस्तुओं की आपूर्ति हो पा रही हैं, साक्षात्कार द्वारा प्राप्त जानकारी से वहाँ के समुदायों में हो रहे पर्यावरण प्रभाव, पर्यटन और देश-विदेश के सम्पर्क में आने से उनके रहन-सहन में बदलाव की भी जानकारी प्राप्त हुई, कान्हा नेशनल पार्क के आदिवासी क्षेत्र में पर्यटन को बढ़ावा देने से यहाँ के समुदायों में धाराप्रवाह विचारों में परिवर्तन आया हैं। वे स्थानीय कलाकृति को अब बाजारों में भी पहुंचा रहे हैं जिससे आमदनी के साथ पहचान भी बढ़ रही हैं।

आलोचनात्मक विवरण - किसी भी स्थान, क्षेत्र, देश, सभ्यता एवं संस्कृति की तारीफ के साथ आलोचना करना आवश्यक हैं, इसलिए भी क्यूकि वहाँ उस क्षेत्र में बीत चुके समय और वर्तमान समय में हुए बदलाव एवं जो घटनाएं घट रही हैं, चाहे वह सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और धर्म के बदलते परिवेश ही क्यूँ न हो, आलोचनात्मक विवरण अति आवश्यक हैं। समुदाय अब समुदाय न रहते हुए लोग, समूह में बदलते जा रहे हैं, कहीं पर आपसी विरोध तो कहीं आपसी सहमति नजर आती हैं। समुदाय, जनसमुदाय में और आपस में बंटकर उप-समुदाय हो रहे हैं, ये उप-समुदाय, उप-जातियाँ आपस में बंटकर संस्कृति का हास कर रहे हैं, और कुछ इसे सँजोने में लगे हैं। पर्यटन द्वारा समाज के इन अंगों को देखना जरूरी हैं, कि बदलते परिवेश के साथ समुदायों की अब स्थिति प्रकार हैं। कान्हा के परिवेश में भी यह सारी बात लागू होती हैं, क्यूंकि आदिवासी आपस में उप-समुदायों में बंटकर रहे हैं, गोंड में उईके, मरकाम, तिलगाम, मसराम, सैययाम, कडोपे, इनवाती, धुरवे, मेंरावी, कुरवेती, धुमकेती, भलावी, परते आदि, आपसी गोत्रों के साथ एक अलग उप-समुदायों में विभाजित हो रहे हैं, एवं बैगाओं में भी मुरिया, सहरिया, भूमिया आदि उप-शाखा देखने मिल जाएगें, ये दोनों आपस में बहुत से सामनता रखते हैं। पर बैगाओं की स्तिथि अन्य की मुकाबले कमजोर हैं।

सांस्कृतिक पर्यटन के लिए कान्हा में विभिन्न क्षेत्र –

[12] ठाकरे – इनके पूर्वजों (खेमलाल) के द्वारा यहाँ पर बगलीपाठ मेंले का शुरुआत हुआ जिससे कान्हा क्षेत्र के सभी समुदाय इसे त्योहार के रूप में मनाते आ रहें है जिसे करीब अस्सी वर्ष से अधिक चुके हैं। हालाँकि यह पूर्वजों के ईश्वर से की गयी प्रार्थना के फल द्वारा संभव हो सका था, पर आज यह क्षेत्र विशेष और सांस्कृतिक धरोहर बन चुका हैं।

[13] चरण लाल – वे करीब सत्तर वर्ष से अधिक हैं और बताते है कि- इस क्षेत्र में सभी समुदाय और जात के लोग आप में मिलकर साथ रहते हैं, लोगों का आना-जाना एक दूसरे के यहाँ बना रहता हैं, वे दिवाली त्योहार में प्रत्येक घर जाते हैं और अपना सिधा उघाना (चाँवल,रुपया या अन्य वस्तु को दूसरों के घरों से प्राप्त करना) कर आते इसमें किसी का किसी भी प्रकार से रोक-टोक एवं पाबंदी नहीं हैं, सभी लोग सवेक्षा और खुशहाली से देते हैं। वे मेंमेंरे खखरा जगाना जानते हैं जो उनके अहीर डांग में बंधी होती हैं। और वह ग्रामीण तंत्रों विद्ययाओं को भी जानते हैं।

चित्र: 01 झोपड़ी

आवास एवं निवासीय स्थल – आदिवासी जनजातियों ने अपने स्थायी निवास के लिए पारंपरिक आवास का ही रुख अभी तक अपनाए हुए हैं, जिनमें उन्होंने मकान की बनावट और सजावट में मिट्टी का उपयोग किया हैं। बैगा जनजाति जंगलों में अधिक निवासरत मिलेगें जिनके घर अभी भी लकड़ी एवं घाँस-फूस के झोंपड़ों या लकड़ी और मिट्टी के सहारे बने दीवार के घर हैं जिन पर रेक (पठेरा) और जानवर के सींगों तथा मजबूत लकड़ी के खूटी (हेंगर) पाए जाते हैं, वही गोंड जनजाति के घर भी मिट्टी के बने मिलेंगे परंतु सुनियोजित और सुरक्षित नजर आएंगे, मिट्टी के घरों में भी पट्टन और छत होते हैं जो बांस की टाटी, मोटे लकड़ियों के मयाल और मिट्टी के कवेलु, अनाजों को सुरक्षित रखने के लिए कोठी और कमरे देखने मिलते हैं। गोंड जनजाति सभ्य नजर आएंगे और वे सामुदायिक रूप से एक साथ रहते हैं, वे खानाबदोश या घुम्मकड़ नहीं होते स्थाई जीवन व्यतीत करते हैं और साथ में रहना पसंद करते हैं। 'देश में ग्रामीण पर्यटन के विकास को समर्थन देने के लिए समर्पित योजनाओं का निर्माण एवं गांवों को समृद्ध बनाने में अहम भूमिका निभाई हैं।'[14] हाल ही में पर्यटन विभाग द्वारा संचालित रुरल होम स्टे ने इको-पर्यटन के माध्यम से ग्रामीण क्षेत्र में स्थानीय बसावट और पारंपरिक घरों के समान ही एक नए और व्यवस्थित मॉडल तैयार किया हैं, जिसे देख गाँव वाले भी उनकी नकल उतार घरों में नए रंगीन और आकर्षक डिजाइन को अपना रहें हैं। जिससे घर की सुंदरता बढ़ रही हैं। यह एक अच्छी पहल हैं, जिसमें जनजातीय समुदायों को एक नए विचार और सीखने की भावना उभरते होते दिखाई दे रहा हैं, इससे पर्यटकों के लिए आकर्षक और जनजातीय लोग अपने को सभ्य और स्वच्छ रखने में बरकरार रह हो पाएंगे।

बोली-भाषा - कान्हा के आदिवासी समुदायों के द्वारा उपयोग में देहाती बोली जाती हैं, यह क्षेत्र करीबी भाषायी क्षेत्रों के संपर्क में होने के कारण गोंड और बैगा जनजाति गोंडी-पारसी, छतीसगढ़ी, हवलाहीन (मंडला) एवं मिलावटी बघेली एवं बुन्देली, और हिन्दी मुख्यतः उपयोग किए जाते हैं, और मराठी और भोजपुरी के कुछ बोल भी सुनने मिल जाते हैं। यहाँ बोलियों के मिश्रण ने उनके पारंपरिक संस्कृति पर ज्यादा हानिकारक असर नहीं पहुँचाया। उनकी पारंपराओं एवं सांस्कृतिक पहचान पूर्वजों से लेकर आज भी चलते आ रहे हैं, यह पर्यटन के लिए अभिन्न अंग हैं। इनकी भाषा एवं बोली इन्हे समुदायों को एक साथ रहने के लिए पहचान पत्र देती हैं, जिससे वे आपस में एक-दूसरे

[14] (केंद्रीय नोडल एजेंसी - ग्रामीण पर्यटन और ग्रामीण होमस्टे, 2023)

की भावनाओं को समझ कर हमदर्द बनते हैं। पर्यटन द्वारा इस क्षेत्र की बोली एवं भाषा को बढ़ावा दिया जा सकता हैं, जिससे आने वाले पीढ़ी में पारंपरिक रूढ़ियों को लेके भय और असहज न करें।

चित्र: 02 एवं 03, तीन बैगा महिलायें एवं गोंड महिला-पुरुष

वेशभूषा - गोंड-बैगा इन दोनों के पहनावा में बहुत साफ अंतर हैं बैगा जनजाति अभी भी ज्यादातर वही पुराने तौर तरीकों अपनाते हुए नजर आती हैं वे मोंगी फरिया[15], लंगोटी, धोती, फेटा, बनयान, अद्धि-कुर्ता एवं कुर्ता, महिलाएं धूतिया, छोटी लुगरा और पोलका में नजर आएगें, हालांकि गुजरते समय के साथ वे अब पहले से अच्छे पहनावा अपना रहें हैं, जिसमें शरीर के ऊपर गहने-आभूषण और फूलों के फूँदरे और उच्च कोटी की धूतिया हैं। जबकि गोंड, बैगा समुदाय से अधिक सभ्य और सुनियोजित नजर आते हैं, वे भी ज्यादातर संख्या में बैगा समुदाय की ही भांति नजर आएगें पर इनके पास पहनने-औढ़ने के लिए धोती-कुर्ता और पेंट-शर्ट, महिलाएं धूतिया, लुगरा-पोलका[16], साढ़ी, में देखने को मिल जायेगे। यदि किसी समारोह में भाग लेते हैं, तो आभूषणों में करधन, कमरबंद, चूड़ियाँ, पैर के चूड़ा, छन्नी, अंगीठी, बिछिया, बाजूबंद (भुजाओं में), गरसोली, सुतिया, पायल, बालों में फुँदरा, माथे में गोदना के साथ रंगीन टीके और बिंदियाँ, तथा स्थाई आभूषण में शरीर के ज्यादातर हिस्सों पारंपरिक गोदना आदि। हालांकि अब दोनों ही जनजाति पर्यटन क्षेत्र में होने से एवं शहर और पर्यटकों के नजदीकी संपर्क में आने के कारण पारंपरिक सभ्यता को साथ लेकर आधुनिकता की चादर ओढ़ रहे हैं।

---

[15] चित्र: सं.02 में मोंगी फरिया - तीनों बैगा महिलाएं पहने हुई हैं।

[16] चित्र: सं.03 में लुगरा-पोलका गोंड महिला हुई हैं।

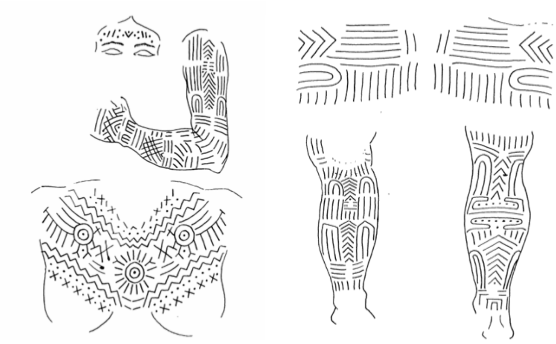

चित्र: 04 एवं 05, गोदना पैटर्न

गोदना/ टोटेम परंपरा – बैगा और गोंड दोनों ही जनजाति में गुदना गुदवाने की परंपरा काफी पुरानी हैं, जो उनको दूसरे समुदाय से अलग दर्शाती हैं वे सर से लेकर पैर (माथे में, जांघों में, पैरो में, सीने में, बाजुओं में) तक गोदना गुदवाते हैं, शरीर में देवों, फूल, पत्नी, दोस्त, और उनकी प्रेमिका या उनका खुद का नाम होता हैं। मरने के बाद उनके पहचान के रूप में एक स्थाई दौलत हैं, मरने के बाद साथ क्या ही लेके जाना हैं। (चित्र: 04 एवं 05, में गोदना पैटर्न देखा जा सकता हैं) एक कथन हैं, "कि यदि कंगन ले आएगें तो उनकी बेटी एक दिन में तोड़ देगी लेकिन गोदना जीवन भर साथ रहेगा"[17] इस प्रकार की मान्यताएं ये दर्शाती हैं, कि ये अपनी परम्पराओ के लेके कितना सजग हैं और उनपे अटूट विश्वास हैं। महिलाओं के गोदना में जीवन और उम्र से संबंधित रेखाचित्र होती हैं, वे गोदना द्वारा किसी घटना या किसी अमिट यादों को हमेंशा संजोए रख सकते हैं, जैसे बचपन के मित्र का नाम और ज्यादातर पुरुष अपनी प्रेमिका या स्वयं का नाम गुदवाना पसंद करते हैं, उनकी यादें उन्हे हमेंशा यह अहसास दिलाती हैं, कि वो उनके लिए कितना समर्पण हैं। इस प्रकार गोदना जनजातीय परंपरा का अंग हैं। यह पर्यटन के दृष्टि से महत्वपूर्ण इसलिए भी हो जाता हैं, क्यूंकि आधुनिक युग में युवा-युवती से लेके अधेड़ उम्र के लोग शौक से टैटू बनवाते हैं। परंतु जनजातीय युवाएं अपनी सांस्कृतिक परंपराओं से दूर होते जा रहें हैं, और मशीनों से टैटू बनवा रहें हैं। हालाँकि तुलनात्मक रूप में ये दोनों ही बात अपनी-अपनी भावनाओं और विशेष स्मृति को जागृत रखते हैं, और उन्हे अपने तौर-तरीके से जीवन निर्वहन का अधिकार हैं।

स्वास्थ्य एवं साफ-सफाई– आदिवासी अपने आप को स्वस्थ रखने में कोई कसर नहीं छोड़ते हैं, वे अपने आप को बीमारियों से दूर रखने के लिए पूजा पाठ तो करते ही हैं पर उसके पहले वे अपने को साफ-सुथरा रखने के लिए प्रतिदिन स्नान करते हैं (हालांकि कुछ ऐसे भी हैं जो इनके इतर हैं, बैगओं के संदर्भ में, लॉरेंस ने अपनी सेटलमेंट रिपोर्ट में लिखा हैं, 'यदि वह स्वयं को धोएगा तो बाघ उसे पकड़ लेंगे या सांप उसे काट लेंगे।[18] उनकी सबसे खास मान्यताएं; हैं जो यह नांगा बैगा के दिनों से चली आ रही हैं, जो हमेंशा अपने आप को पत्तों से साफ करते थे और परिणाम दिखाकर ठाकुर देव का दिल जीत लेते थे)[19] जिनमें वे जमीन की ऊपरी सतह पर जमी चिकनी मिट्टी

[17] (एल्विन, 1939, पृ. 19).

[18] (एल्विन, 1939, पृ. 17)

[19] (एल्विन, 1939, पृ. 17)

- चित्र: 02 एवं 03, तीन बैगा महिलायें एवं गोंड महिला-पुरुष के पहनावा और आभूषण का शृंगार सहित चित्र हैं, जिसमें वे अपने पारंपरिक सभ्यता को दर्शाते हैं।

(मूड माटी) का उपयोग बालों में किया जाता हैं, यह सैम्पू की तरह कार्य करता हैं। वे कुआं का साफ पानी, तलाब में नहाने, नदियों में डुबकी एवं तैरने जैसे क्रियाएं कर स्वयं को स्वस्थ रखते हैं। हालाँकि बहुत से लोग प्रतिदिन यह काम नहीं करते हैं इस बात को भी नहीं झुटलाया जा सकता हैं, पर उनके द्वारा अपने आप को स्वस्थ रखने की यह क्रिया लगातार जारी हैं। स्वस्थ रहने के लिए पूजा करते हैं, पूजा में साफ-सुथरा लोटा एवं पात्रों का इस्तेमाल और शरीर में नए वस्त्र धारण किया जाता हैं, इस प्रकार सेव देखा जा सकता हैं कि स्वच्छता के लिए तत्पर रहते हैं। तुलनातमक रूप से विश्लेषण किया जाए तो शहरी समुदायों की अपेक्षा इनमें सफाई का स्तर उतना नहीं रहता हैं जितना की टाइल्स की फर्स में पर इसका यह अर्थ नहीं हुआ की वे स्वास्थ्य एवं साफ-सफाई का ध्यान नहीं रखते हैं। स्वस्थ रहने के लिए वे जंगली जड़ी-बूटी एवं फल-फूल का खास तौर पर इस्तेमाल करते हैं, जो आयुर्वेदिक होते हैं।

घरों की लिपाई एवं छपाई - वे अपने मिट्टी के घर में साफ-सफाई के लिए आज भी मिट्टी और भूसा (कुटार) का पानी के साथ बने गारे को छापने के लिए उपयोग करते हैं, उसके ऊपर प्रत्येक एक-दो दिन बाद गाय के गोबर और पानी के बने मिश्रण से लिपाई करते हैं। जिन क्षेत्रों में भुरभुरी काली मिट्टी (विशेष प्रकार की जो जंगलों में पाई जाती हैं) को घरों के फर्श को चमकाने में उपयोग करते हैं। दीवालों में चुही एवं चूना और वर्तमान समय में आर्टीफिशल कलर डिसटम्बर से पोताई की जाती हैं। घरों की लिपाई-पुताई की संरचना तीन प्रकार की होती हैं - (1) जमीन गोबर-पानी मिश्रण, (2) जमीन ओर दीवाल के बीच लंबाई में करीब 10 इंच से 1 या 1.5 फुट जिसमें चूना या चूही की पुताई और (3) 1 या 1.5 फुट के ऊपर आर्टीफिशल कलर या डिसटम्बर से दीवालों की पुताई एवं कुछ दीवालों में पूरा चूना या चूही का इस्तेमाल किया जाता हैं। घरों के दीवारों में पंजों के निशान पाए जाते हैं, ये छाप दीपावली पर्व में बनाएं जाते हैं, अनाज कोठियों में धान के खेतों के कीचड़ से नवा खाने के दिन बनाया जाता हैं। साथ की मिट्टी से बने कलाकृतियाँ भी देखने को मिलते हैं, हालाँकि अब इस प्रकार की कलाकृतियाँ बनना बंद होने लगे हैं, परंतु कुछ विशेष स्थानों में ऐसे कलाकृतियाँ देखने को मिल जाते हैं, जिनके सांकेतिक महत्व बुरी साया को दूर रखने में सहायक होते हैं।

चित्र: 06, भिलवा

- (एल्विन, 1939, पृ. 20 & 21), चित्र: 04 एवं 05, में गोदना पैटर्न के साक्ष्य उपलब्ध हैं।

खानपान – आदिवासी अपने देसी खाने-पीने के लिए जाने जाते हैं, खानपान में अनाज जैसे- कोदो, कुटकी, मड़िया (रागी), मक्का, धान की खेती करते हैं। पेज बारीक पिसे अनाज की एक रसोई हैं, जिसे गर्म पानी में उबाल कर बनाया जाता हैं, वनस्पतियों में महुए का पेड़ इनके लिए बहुत ही उपयोगी हैं, महुए के फूल को सूखा कर इसे किंडवन विधि द्वारा रस निकाल कर मदिरापान करते हैं। दूसरा उपयोग 'महुए के फूल को सुखाकर इसे बारीक भून कर कोया बनाया जाता हैं, खाने में बेहद स्वादिष्ठ होता हैं, मान्यता हैं कि कोया के सेवन करने से बीमारियाँ दूर रहती हैं और व्यक्ति साल भर स्वस्थ रहता हैं। व्यंजनों में, लपसी, चिला रोटी, भाजिया, बुलीया, ठठरी, करंझी, गिरची कांदा के चिप्स, लड्डू, पापड़, मोहलाइन पत्ते में बनी रोटी (फाँदका), उड़द दाल के बड़े, अरहर, लहसुन और चावल आटा की रोटी, बरमरकास के भाजी बड़े, मक्का एवं मढ़िया (रागी) की रोटी एवं पेज, गुल्ली का तेल, भजरी की चटनी, कोचई पान, चेंच भाजी, कूट भाजी, पथरचट्टी, पुटपुर, गिरची कांदा, डांग कांदा, पिहरी (मसरूम), पुरि, इमली एवं आम का रस (पनह), मांस और मछली के साग एवं भात (सब्जी एवं पके चावल) और साथ में मदिरापान, गर्मी में ताड़ी, वनस्पतियों में चार-चूरना, डुमर के फल, भिलवा, आंवला, गाद, सेमल (सेमर), तेंदू, हर्रा, बेहड़ा, करोंदा, का सेवन करते हैं। आदिम तौर पर ये आज भी मछली और मांस को सुखा कर सुरक्षित रखते हैं, और बारिश तथा ठंड के मौसम में खाते हैं। खाना पकाने के लिए मिट्टी के चूल्हे, पत्थर के सिलोटी, कंडे (उपले), मिट्टी के बर्तनो में हड़िया, तवेली (कढ़ई), परई/परए (ढक्कन), मढ़ना, पानी रखने के लिए गंगार, पानी निकालने तूमा आदि। अंकिता लिखती हैं, "कोदो या कुटकी के साथ सब्जी एवं दाल का भी प्रयोग किया जाता है। इसके अतिरिक्त भाजी (पेज), दाल, रोटी, चावल, चटनी, नून मिर्चा, पत्ताली (टमाटर की चटनी) भी मुख्य रूप से आहार में सम्मिलित है। रात के समय चावल अधिक पसंद किये जाते हैं। इसके साथ ही आम, जामुन, आँवला, अनेक प्रकार के कन्द मूल, सब्जियाँ एवं माँस खाने में प्रयोग किये जाते हैं। पेज, जो एक प्रकार का प्रिय पेय है, कोदो या कुटकी को बारीक पीस कर एक बड़ी हाण्डी में पका कर बनाया जाता है। इसके अतिरिक्त महुए की दारू भी मुख्य पेय है, जिसका प्रयोग मुख्यतः किसी खास अवसर पर एवं देवी-देवताओं की पूजा-अर्चना में भी किया जाता है।"[20] इस प्रकार पर्यटकों को आदिवासी क्षेत्रों में पर्यटन पश्चात आदिवासी के खानपान से संबंधित वस्तुवों की जानकारी मिलती हैं। ज्यादातर जनजातियों द्वारा 21वीं सदी के तीसरे दशक में भी भोजन पकाने के लिए मिट्टी के चूल्हे का इस्तेमाल करते हैं।

- चित्र: 07, पुजारी द्वारा मेले में पूजा-साधना पद्धति को पूरा करते हुए, उसके बाद सारे डांगधारी और देवी/देवता के नाम पर लोग छोटे कुटिया के चक्कर लगाते हैं।

[20] (अग्रवाल, 2021, पृ. 14)

चित्र: 07, पुजारी द्वारा मेले में पूजा-साधना

मेंले-त्योहार – बाजार, हाट, मंढई-मेंले, ये सामूहिक रूप से एक होने और वस्तुओ के आदान-प्रदान करने का सलीका हैं, पर अब इसमें कमी देखी जा रही हैं। वे बाजोरों से जरूरत की वस्तुओ को खरीदी और अपने पास रखे अतिरिक्त वस्तु को बेच दिया करते हैं या वस्तुओं का आदान-प्रदान करते हैं। मंढई-मेंले की अवधारणा काफी पुरानी नहीं हैं पर अब उनके लिए यह आवश्यकताओ की पूर्ति करता हैं, इसकी शुरुआत दीपावली पर्व के बाद आरंभ होता हैं और फरवरी के अंत तक इनकी विशेष लहर होती हैं ये अलग-अलग स्थानों में पारंपरिक रूप से जानवर के बली के साथ प्रारंभ होती हैं। अहीर समुदाय की कलात्मक नृत्य प्रदर्शन इसके केंद्र बिन्दु होते हैं जो अपनी लंबी डांग के फुँदगी (छोर) में बंधे मोर के पंखों का जूड़ा होता हैं। हाथों में, लठ बरछा, फारसा, तुर्रा, संसी, ढोल, नंगाड़े और माँदर के धुन की गूंज किसी भी साधारण व्यक्ति को आनंद से भाव-विभोर कर सकता हैं। यह पर्यटन के लिए आकर्षण का केंद्र हैं।

मनोरंजन – किसी भी व्यक्ति के जीवन को रोमांच और खुशियों से भरा क्यू नहीं होना चाहिए, इसलिए मनोरंजन जैसी शब्दों की उद्घोषणा होनी जरूरी हैं। पर्यटन मनोरंजन के दृष्टि में ही जाती हैं, आदिवासी समुदायों ने अपने जीवन को हमेंशा मनोरंजन और रोमांचित रखने के लिए कई क्रीड़ाए करते आए हैं उनमें सबसे पहले जंगल में घूमना, पेड़ चढ़ना, मधुमक्खी छत काटना, मछली पकड़ना, ताड़ी एवं मदिरापान, तंबाकू एवं गाँजा सेवन, सामुहिक नृत्य, गेड़ी, बैलों की दौड़, डमरू, चिट्टा खेलना, त्योहारों एवं शादीयों में शैला एवं करमा नृत्य करना आदि। इस प्रकार पर्यटक यहाँ आदिवासी मनोरंजनो के साथ अपना कीमती समय व्यतीत कर सकते हैं एवं आदिवासी समुदायों के चहल-पहल में सम्मिलित हो सकता हैं।

पारंपरिक जनजातीय लोक नृत्य एवं लोक गीत - कान्हा के जनजातीय क्षेत्र में लोक नृत्य एवं लोक गीत का विशेष महत्व हैं, वे इसे अपने सभ्यता का अंग मानते हैं, उनके द्वारा किया जाने वाला नृत्य और गायन पर्यटकों के लिए यादगार हो सकता हैं। वे अपने परंपरा को आगे बढ़ते हुए लगातार कई वर्षों से करते आ रहे हैं, करमा, मांदर, पंदेय आदि नृत्य हैं, करमा, ददरिया, सुआ, बिहाव, गोंडी, फगवा, सावन में सैला-दादर, जवारे, पंडवानी के गायन किए जाते हैं। शरीफ मो.लिखते हैं - गोण्ड जनजाति के सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन में प्रचलित गीत निम्नानुसार

हैं- कहरवा, बिरहा, ददरिया, सैला, रीना, जस (भगत), भडौनी, सजनी, करमा झूमर, करमा लंगडा, करमा लहकी, करमा ठाढ़ा और करमा रागनी।[21]

ठाढी करमा-

“सुग-बुग सुग-बुग चंदा अगैय, मरघट ले उजियारा गा,
मरघट ऊपर कोदो बोयो, भूतन के खनधारा रे,
एक चिठ्ठी दैय दे मोला, दिल्ली शहर मा,
भेज देतो मोर चोला जाथैय सिवनी वारा।।”[22]

सैला-वंदना-

“तरे हरे नाना रे तरे ना नारी हो।
मैया तरे हरे ना नारीना।।
शारद शारद रे सिंग शारद हों।
मैया शारद सिंग रे सवार।।”[23]

वाद्‍यंत्र – वाद्‍यंत्र के माध्यम से लोककला और संस्कृति को बढ़ावा मिलता हैं, वाद्‍यंत्र में संसी, ढोल, ढोलक, चटकोला, ठड़का, नंगाड़े, माँदर, टिमकी, तबला, थाली, बाँसुरी, तुर्रा, पैजनिया, घुँघरू, तिसकी[24] मोहरी, और पूरक वाद्‍य (खड़ताल, झांझ, मंजीरा)[25] आदि मनोरंजन के उपयुक्त सामग्री होते हैं क्यूँ मनोरंजन के लिए उपयोगी होते हैं इनके द्‍वारा वे समारोह में नृत्य - गान आदि जैसी क्रियाएं करते हैं आदिवासी समुदाय के द्‍वारा अपने हाथों से बनी या किसी सह-स्थानीय समुदाय से लेके वे लोग वाद्‍यंत्रों का इस्तेमाल करते हैं इनकी खास विशेषता यह कि इनकी लय ताल और धुन अलग होती हैं जो केवल यही लोग अच्छे उद्‍धबोधन कर सकते हैं।

चित्र: 08, गोंड, लमसना विवाह

---

[21] (मोहम्मद, 2003 , पृ. 17)
[22] (तिवारी, सम्पदा मध्यप्रदेश की जनजातीय सांस्कृतिक परम्परा का साक्ष्य, 2008, पृ. 327)
[23] (कुशराम, 2003, पृ. 10)
[24] (एल्विन, 1939, पृ. 431)
[25] (मोहम्मद, 2003 , पृ. 182)

शादी-विवाह – शादी विवाह आदिवासी जनजाति की अनूठी परंपरा रही हैं वे शादी के अलग-अलग रसमें रिवाजे देखने लायक होते हैं लड़के के घर में तीन दिन, लड़की के घर में दो दिन शादी चलती हैं, खास बात यह हैं कि शादी में होने वाले सात फेरों में लड़की के घर चार और लड़के के घर तीन फेरे होते हैं, शादी के लिए हरे मंडप प्रत्येक शादी में देखने को मिलेंगे और लोक गीत शादी में गाये जाते हैं। लमसना "यह विवाह एक लड़की और उसके लमसना के बीच हैं, जो पहले से ही उसके पिता के घर में रहता हैं, इसलिए एक गांव से दूसरे गांव तक कोई बारात नहीं निकाली जाती, दूल्हा विवाह समारोह के अंत में दुल्हन को साथ घर लेके नहीं जाता हैं, बल्कि वह स्वयं अपने ससुराल में रहने लग जाता हैं"[26] 'तरीन को नाना नाना रे नानी तरीन को नाना, जैसे गीतों का गायन किया जाता हैं और नाचने में करमा नाच किया जाता हैं'[27] यह विशेष समोरोह भी पर्यटकों को देखने के लिए हैं।

धार्मिक स्तिथि एवं पर्वों – आदिवासियों ने खानाबदोश जीवन में अपने लिए कम ही पर्व संरक्षित किए हैं इसलिए अधिकतर इनके पर्व हिन्दुओं से मिलते-जुलते हैं, पर उनके अपने पर्व जैसे - हरियाली, पोला, नवाखाना, खनिहारी, बड़ा देव, दूल्हा देव, डेहरी देव, धरती माता, ठाकुर देव, खिला मूठवा, नारायण देव, भितरी देव, भवानी मत, खेरोपतिखेरोदाई, दुर्गा चंडी, काली कंकाली पूजा के लिए धार्मिक आहूति, प्रकृति की पूजा, होली, दिवाली, नवरात्रि आदि को धार्मिक महोत्सव के रूप में मनाते हैं। इनके देव (गोत्र) एक, दो, तीन, चार, पाँच, छः, सात, आठ देव आदि गोत्रों में बटें होते हैं, सभी के देवी देवता अलग होते हैं, जिनमें उनके संख्या पर आधारित होते हैं, पर सबसे प्रमुख देव फड़ा-पेन (महादेव/बड़ादेव) होता हैं।[28] अंकिता आदिवासी के धार्मिक व्यवस्था को संदर्भित करते हुए लिखती हैं- 'आदिवासी जनजाति में अमूर्त पूजा अराधना का प्रचलन है। इनके देवी-देवताओं का न कोई रूप है, न रंग। अतः पूजा स्थल पर किसी देवी-देवता की मूर्ति न होकर उनके प्रतीक स्वरूप लकड़ी का खंभा, वाद्य यन्त्र 'बाना' (चित्र फलक सं0-25) और त्रिशूल स्थापित कर दिये जाते हैं साथ ही देवी-देवताओं के अलग-अलग रंग के ध्वज भी लगाये जाते हैं (चित्र फलक सं0-24)। जो सुख-दुख, हर्ष उल्लास, भय-संकट में एक गहरे रहस्य और जिज्ञासा को प्रकट करते हुए प्रतीत होते हैं।' पंडा बाबा[29] जो जादू-टोन, झाड-फूँक और तंत्र-मंत्र सिद्धियों को जानते हैं, जिनमें गुप्त क्रियाएं और प्राकृतिक शक्तियों को अपने बस में करने की क्षमता होती हैं, इनकी भी परंपरागत शाखा होती हैं जिनके उप-शाखाएं उनके चेलों के द्वारा संचालित होते हैं इस प्रकार धर्म के माध्यम से जनता को लामबन्ध और एकत्रित किया जाता हैं, नवरात्रि या विशेष पर्व में इनके चेले एकत्रित होकर पूजा-अर्चना उत्सव मानतें हैं। यह आदिवासियों में एक विशेष परंपरा है वेरियर एलविन लिखते हैं कि जनजातियों में जादू-टोना, टोटका विद्या सीखने की परंपरा रही जो हैं प्रत्येक बच्चे को अपने दादा या पिता से सीखना होता हैं, जो गुप्त मंत्रों के माध्यम से सफल

[26] (एल्विन, 1939, पृ. 273), (हिवाले सॅमराव, 1935, पृ. 26)
[27] (एल्विन, 1939, पृ. 275), (वेरियर, 1936), (हिवाले सॅमराव, 1935, पृ. 67), (अग्रवाल, 2021, पृ. 27)
[28] (अग्रवाल, 2021, पृ. 19,20,21,22), (एल्विन, 1939, पृ. 81,)
[29] (वेरियर, 1936, पृ. 12, 134)

होता हैं । इसे सीखने के लिए गुरु और उसको गुरु दक्षिणा मे मदिरा देना पड़ता हैं इस प्रकार जनजातीय समुदायों के धार्मिक अनुष्ठान अनूठे हैं, जिन्हे पर्यटक आध्यात्मिक तौर पर देख सकता हैं।[30]

चित्र: 09, वैद्यराज महेन्द्रसिंह

पारंपरिक औषधियाँ – हर्रा, बेहड़ा, धतूरा, नींबू, बेल, बेर,
ज्वारपाटा, इंद्रवन, अमरबेल, पीपल, तुलसी, सहतूत, कनेर, गुलेर, अश्वगंधा, चिरंजीवी, गजफोड़, पिहरी, गज के पत्ते एवं जड़, बरमासी के जड़, डुमर के फल, साल वृक्ष का लार (धूप के लिए), परसा (पलास के फूल एवं जड़), सेमल के छाल, धाद, कहवा, महुआ की पत्ती, फूल और छाल, आंवला, नीम, जंगली जड़ी-बूटी एवं छाल, नदियों के किनारे उगने वाले कीमती औषधि के पौधे, जंगली पान, भलुआ फल एवं बीज (ब्लैक नट), तेंदू फल, आदि कीमती पारंपरिक औषधियाँ देखने मिलते हैं। जंगलों मे मिलने वाले वे सारे पेड़ एवं पौधे औषधीय हैं जो एक वैद्य जानता हैं
ग्राम सभा – ग्रामीण स्थानीय निकाय आज भी मौजूद हैं। ग्राम सभा से अभिप्रेत है, ऐसे व्यक्तियों से मिलकर बनने वाला कोई निकाय जिनके नाम ग्राम स्तर पर या उसके ऐसे भाग में जिसके लिए उसका गठन किया गया, जिसमें समुदाय, परम्पराओं और रूढ़ियों के अनुसार अपने कार्यकलापों का प्रबंध करता हो[31], किसी ग्राम में एक से अधिक ग्राम सभा का गठन किए जाते हैं, जैसे कोई ग्राम या ग्रामों का समूह, खेडा (हेमलेट) या खेडों (हेमलेट्स) के समूह जिसमें फलिया, मजरा, टोला या पारा आदि सम्मिलित हैं, एक प्रकार से आवास या अवासों का समूह।[32] जहां पर ग्राम का मुख्या पटेल होता हैं, जिनका निर्णय सर्वमान्य होता हैं। पटेल, गाँव के सदस्यों से सलाह-मसवरा से अंतिम निर्णय लेता हैं। राज्य सरकार ने पेसा कानून लागू कर इस परंपरा को और भी सुदृण किया हैं, पर्यटकों के लिए यह जिज्ञासाजनक हैं। कि आज भी कान्हा के क्षेत्र में आदिवासीय जनजातीय ग्राम्य व्यवस्था कैसे संचालित हो रहीं हैं।

[30] (एल्विन, 1939, पृ. 54-64, 338-358), (वेरियर, 1936, पृ. 12, 134), (वाहिया, 2013, पृ. 29-44)
[31] (मध्यप्रदेश पंचायत उपबंध (अनुसूचित क्षेत्रों पर विस्तार) नियम,, पृ. 3)
[32] Ibid.

परिणाम

पर्यटन और पर्यटन के उद्देश से हमें स्पष्ट हो जाता हैं कि एक पर्यटक को किन किन बातों का ध्यान देना चाहिए, खासकर आदिवासी क्षेत्र की सांस्कृतिक विविधता को लेकर आज पर्यटन के आयाम बढ़ गए हैं और पर्यटन क्षेत्र को भी छोटे-छोटे उपखंडों में विभाजित किया गया हैं। सांस्कृतिक पर्यटन में पर्यटक, पर्यटन क्षेत्र की बोली-भाषा, रहन-सहन, स्वास्थ्य, शिक्षा, गाँव, घर, खेती, मेंले-त्योहार, पकवान, पारंपरिक लोक नृत्य एवं गीत, शादी-विवाह की रस्में, धार्मिक पर्व, देवी-देवता, पंडा-पुजारी, गुनिया-गौजी एवं रूढ़ियाँ, गोदना, लोक कलाकृतियाँ, यंत्र, वाद्ययंत्र, समूह, समुदाय, सभा और संथा आदि को ध्यान में रखते हुए पर्यटन किया जा सकता हैं। यह देखा गया कि आज से दो दशक पूर्व जैसे दयनीय स्थिति से ऊबर रहे हैं, और हिन्दू एवं शहरी परंपराओं की ओर आकर्षित हो रहे हैं। घर अब पहले की अपेक्षा सुदृण हैं सरकारी योजनाएं काम कर रही हैं, अँधियारे से दूर बिजली की आपूर्ति हो रही हैं। मनेरेगा जैसे योजनाओं ने आर्थिक तंगी को कुछ हद तक दूर किया हैं। बच्चों को स्कूल चले हम जैसे निःशुल्क योजनाओं ने आकर्षित किया हैं। जिससे समझबूझ और चेतन आ रही हैं जो संस्कृति को समझने और सँजोने के लिए आवश्यक हैं इस प्रकार पर्यटन के द्वारा कान्हा क्षेत्र के आदिवासीयों की वस्तुस्थिति को समझाया गया हैं।

निष्कर्ष

यह अध्ययन कान्हा आदिवासी क्षेत्र की सांस्कृतिक विविधता का मूल्यांकन करती हैं, जिसके माध्यम से आदिवासी जनजाति क्षेत्र की सामाजिक संरचना और जीवन-यापन से संबंधित जानकारी प्राप्त होती हैं। जनजातीय क्षेत्र में हो रहे बदलाव और आधुनिक अनुशरण के महत्व को संदर्भित करती हैं। जिससे सांस्कृतिक एवं पारंपरिक सभ्यता को बढ़ावा और पहचान मिल रहा हैं। जनजातीय समुदायों को नई जानकारी और पर्यटकों को भी पर्यटन के माध्यम से सकारात्मक सोच और खुली आजादी देखने मिलती हैं। अतः पर्यटन पर्यटकों और पर्यटन क्षेत्र में निवासरत स्थानीय लोगों दोनों के लिए महत्वपूर्ण हैं।

संदर्भ

1. अंकिता अग्रवाल. (2021). गोंड चित्रकला एक समीक्षात्मक अध्ययन, पी-एच० डी०, शोध-प्रबन्ध. बरेली: महात्मा ज्योतिबा फुले रूहेलखण्ड विश्वविद्यालय.
2. एल्विन, व. (1939). द बैगा. लंडन: जॉन मरे.
3. कुशराम, र. (2003). गोण्ड जनजातीय गीत. भोपाल: आदिवासी लोक कला एवं तुलसी साहित्या अकैडमी.
4. केंद्रीय नोडल एजेंसी - ग्रामीण पर्यटन और ग्रामीण होमस्टे. (2023).. ग्रामीण पर्यटन पर्यटन मंत्रालय, भारत सरकार.
5. तिवारी, क. (2008). सम्पदा मध्यप्रदेश की जनजातीय सांस्कृतिक परम्परा का साक्ष्य. भोपाल: आदिवासी

लोक कला एवं तुलसी साहित्या अकैडमी.

6. तैत्तिरीय उपनिषद. (2017). स्वामी त्रिभुवन दास . दिल्ली : चौखम्बा संस्कृति प्रस्थान.
7. दुबे, श. (2014). परंपरा इतिहास-बोध और संस्कृति. नई दिल्ली: राधाकृष्ण.
8. नीरज गोहील. (2019). पोटेन्सियल एण्ड प्लानिंग फॉर ट्राइबल टुरिज़म इन इंडिया: अ केस स्टडी ऑन गोंड ट्राइबस ऑफ मध्यप्रदेश, स्टेट इंडिया . स्कॉलएग इंटरनेशनल जर्नल ऑफ मल्टीदिसप्लेनरी एण्ड इलाइड स्टडी , पृष्ट सं.72-81.
9. मध्यप्रदेश पंचायत उपबंध (अनुसूचित क्षेत्रों पर विस्तार) नियम, 2022 . पंचायत संचालनालय, मध्यप्रदेश भोपाल.
10. मोहम्मद, प. श. (2003). गोण्ड गीत, मध्यप्रदेश की गोण्ड जनजाति के पारम्परिक गीत. भोपाल : जनजातीय लोक कला एवं बोली विकास अकादमी मध्यप्रदेश रुस्कृति परिषद.
11. वाहिया, ए. (2013). आस्पेक्टस ऑफ गोंड एस्ट्रोनॉमी . जर्नल ऑफ एस्ट्रोनॉमिकल हिस्ट्री एंड हेरिटेज, 16(1), पृ. 29-44 .
12. वेरियर, ए. (1936). लीव्स फ्रॉम द जंगल: लाइफ इन अ गोंड विलेग. लंडन: जॉन मरे पब्लिशर्स लिमिटेड.
13. श्रेष्ठ पर्यटन गाँव प्रतिशप्रधा, (2023). ग्रामीण पर्यटन. पर्यटन मंत्रालय भारत सरकार.
14. हिवाले सॅमराव, ए. व. (1935). सोंग ऑफ द फॉरेस्ट द फोलक पोइट्री द गोंडस. लंडन: जॉर्ज एलेन एण्ड अनविल लिमिटेड